स्वामी विवेकानंद के शिक्षा दर्शन का आधार वेदान्त

डॉ. आलोक भारद्वाज,

प्राचीन भारतीय इतिहास विभाग,
विद्यांत हिन्दू स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
लखनऊ

सुभाष चंद्र बोस के अनुसार "स्वामी विवेकानंद अपने बलिदान में बेधड़क, अपनी गतिविधि में अथक, प्रेम में असीम, बुद्धिमत्ता में गहन और प्रतिभासम्पन्न, भावनाओं में उत्कट, आक्रमण में निर्मम, फिर भी शिशुवत् सरल थे। वे हमारे जगत के विलक्षण व्यक्तित्व थे पुरुषार्थ से भरपूर, विलक्षण योद्धा जिसके कारण वे शक्ति के उपासक बने और अपने देशवासियों के उत्थान के लिए उन्होंने वेदांत का व्यावहारिक रूपांतर किया।"[1]

स्वामी जी पूर्व और पश्चिम में जो सर्वोत्तम था, उसके समन्वय के अग्रदूत है। भारत मनुष्य में निहित नारायणत्व का प्रवक्ता है, पश्चिम भौतिक वैज्ञानिक सत्यों की खोज में विश्वास करता है। सम्पूर्ण मानव का आदर्श है आध्यात्मिकता और विज्ञान का समन्वय। यह आदर्श भावी मनुष्यता के मंत्रदृष्टा विवेकानंद में मूर्त हुआ। पश्चिम में उन्हें वैश्विक प्रेम, सहिष्णुता और भाई–चारे के सन्देशवाहक तथा वेदांत के महान आध्यात्मिक गुरु के रूप में स्मरण किया जाता है जबकि भारत में उन्हें ऐसा विलक्षण धर्मगुरु माना जाता है जिन्होंने मानव व्यक्तित्व को गरिमा देकर ईश्वर केंद्रित मानवतावाद के धर्म का शिक्षण दिया, उन्हें व्यावहारिक वेदांत का ऐसा महान व्याख्याता माना जाता है जिन्होंने निभृत गुफाओं और वनों से लाकर उसे जन सामान्य के दैनंदिन जीवन से जोड़ा, उन्हें ऐसे राष्ट्रभक्त संत के रूप में ग्रहण किया जाता है जिन्होंने आत्म साक्षात्कार के आध्यात्मिक साधन के रूप में सेवा को प्रतिष्ठित किया, उन्हें ऐसे उदात्त बौद्धिक समन्वयसाधक के रूप में सम्मान प्रदान किया जाता है जिसने पूर्व और पश्चिम, तर्क और श्रद्धा, सिद्धान्त और व्यवहार, त्याग और सेवा, धर्म और विज्ञान एवं विविध विचारसरणियों के बीच सुदृढ़ सेतु–निर्माण का युगान्तकारी कृत्य सम्पादित किया।

स्वामी विवेकानंद का हृदय करुणा का सागर था। उसमें दीन दुखियों के प्रति असीम ममता थी। उनकी दृष्टि में वही सच्चा महात्मा है जिसका हृदय दलित, शोषित, असहाय और गरीब के लिए तड़पता है अन्यथा उसे दुरात्मा मानना चाहिए।[2] "विवेकानंद मानते थे कि नारायण ही दरिद्र के रूप में प्रकट हुए हैं ताकि हम उनकी सेवा कर मोक्ष–लाभ कर सकें। उनके अनुसार मानव शरीर रूपी देवालय में विराजमान प्रभु का साक्षात्कार करना ही सर्वाधिक व्यावहारिक उपासना है।[3] रोम्यां रोलां ने स्वामी विवेकानंद की रचनात्मक प्रतिभा को दो शब्दों में समाहित किया है– सन्तुलन और समन्वय उनके अनुसार स्वामी जी समग्र मानव शक्ति की समस्वरता के मूर्तिमान स्वरूप थे।[4]

किसी व्यक्ति के शिक्षा दर्शन का आधार उसका जीवन दर्शन होता है। स्वामी विवेकानंद के शिक्षा दर्शन को उनकी वेदांत दार्शनिक विचारधारा ने पूरी तरह से आकार प्रदान किया है। स्वामी जी के अनुसार वेदान्त दर्शन की प्रमुख विशेषता यह है– "वेदान्त परिपूर्ण रूप से अवैयक्तिक है। इसका जन्म किसी व्यक्ति या ईश–दूत से नहीं हुआ है फिर भी पैगम्बरों और विशिष्ट व्यक्तियों के आधार पर खड़े हुए तत्ववादों से इसका कोई विरोध नहीं है। आधुनिक काल में जिसे वेदांत कहा जाता है, वह भारत में उद्भूत विभिन्न संप्रदायों के समय में निर्मित विचारसरणी है। उसकी विभिन्न प्रकार से

व्याख्याएँ की गई हैं, जिन के आरम्भ में द्वैत और पर्यवसान में अद्वैत परिलक्षित होता है।"[5]

इस प्रकार वेदांत की विभिन्न अभिव्यक्तियाँ, द्वैत–विशिष्टाद्वैत और अद्वैत की भाँति एक दूसरे के प्रतिकूल नहीं है बल्कि उन्हें उच्चतर लक्ष्यों की दिशा में मानव मस्तिष्क की गतिशील यात्रा के विविध सोपानों के रूप में देखा जा सकता है। व्यक्ति इस सत्य को या तो एकत्व के रूप में पहचानता है या विविधता में जिसके पीछे अलग–अलग अवसरों पर उसकी मनःस्थिति ही मुख्य कारण है।

स्वामी विवेकानंद एक व्यावहारिक दार्शनिक थे। उनका वेदान्त पुस्तकीय सिद्धांत मात्र नहीं है। उनका वेदान्त विज्ञान का विरोधी भी नहीं है। सारी वस्तुओं को एक ही शक्ति की अभिव्यक्तियाँ मानने वाला विज्ञान उपनिषदों के ईश्वर का ही स्मरण कराता है।[6]

स्वामी जी का वेदान्त धर्म–सर्वधर्म समादर और सहिष्णुता पर आधारित है उन्होंने आध्यात्मिक भ्रातृत्व का संदेश दिया है और विश्वजनीनता को उसका प्रमुख गुण निरूपित किया है। हर मत सत्य के किसी न किसी अंश का प्रतिनिधित्व करता है। मनुष्य भूल से सत्य की ओर अग्रसर नहीं होता बल्कि एक सत्य से दूसरे सत्य, छोटे सत्य से बड़े सत्य की ओर बढ़ता है। उनका वेदांत सर्वसमावेशी है वह तत्वतः विश्वधर्म है जो सभी ईशदूतों का सम्मान हुए भी किसी काल, किसी पंथ या किसी ग्रंथ के भीतर कैद होने का विरोधी है। वह अतीत से शिक्षा लेता है ताकि वर्तमान पुराने दोषों से छुटकारा पाकर उज्ज्वल भविष्य की दिशा में मनुष्य जाति को अग्रसर कर सके।[7]

हर प्राणी के अंदर दिव्यता विद्यमान है। उस अंतर्निहित दिव्यता का साक्षात्कार करना ही मनुष्य का सर्वोत्तम लक्ष्य है। परिपूर्ण स्वाधीनता की प्रतिष्ठा केवल तभी सम्भव है जब व्यक्ति इस जीवन लक्ष्य को उपलब्ध कर लेता है। स्वाधीनता हर अणु की आंतरिक प्यास और पुकार है। स्वाधीनता हमारे विकास की शर्त है। पराधीनता में संकोच और संकीर्णता है, स्वाधीनता में प्रसार और विस्तार है। स्वाधीनता हमारी सहज प्रकृति है जिसे हम कृत्रिम बंधनों में बंध कर गवां चुके हैं। वह हमारे भीतर है, उसे कहीं बाहर से नहीं लाना है, किन्तु हम उसके प्रति सजग नहीं हैं। स्वाधीनता की तड़प अपने मूल स्वरूप की ओर प्रत्यावर्तन की आकांक्षा है। वह जीवन का चिन्ह है, उसकी उपस्थिति जीवन की विद्यमानता का प्रमाण है। ऐसा कोई घट नहीं जहाँ स्वाधीनता की चाह विद्यमान न हो। यही हमारे अभ्युत्थान का मूल कारण है। स्वामी जी 'कर्मयोग' में कहते हैं– "Everything that we perceive around us is struggling towards freedom, from the atom to the man, from the insentient, lifeless particle of the matter to the highest existence on earth, the human soul. The whole universe is, in fact, the result of this struggle for freedom. Everything has a tendency to infinite dispersion. All that we see in the universe has for its basis this one struggle towards freedom; it is under the impulse of this tendency that the saint prays and the robber robs. When the line of action taken is not a proper one, we call it evil, and when the manifestation of it is proper and high, we call it good. But the impulse is the same, the struggle towards freedom."[8]

वेदान्त नर के भीतर छिपे नारायण पर दृष्टि रखने के कारण उसे अनन्त शक्ति और सम्भावनाओं का स्वामी मानता है। दुर्बलता उसके स्वभाव के विपरीत है, वह सारे दुर्गुणों की जननी है। वेदान्त सारी जीवन साधनाओं का अधिष्ठान शक्ति को मानता है। शक्ति जीवन में हमारा ध्रुवतारा है। यह सत्य का मार्ग है, संसार की बुराइयों की औषधि है, उत्पीड़न के विरुद्ध कवच है, शोषकों की दुरभिसन्धि को विफल करने के लिए अमोघ अस्त्र है।

वेदान्त का व्यावहारिक रूप है सेवा। सेवाविहीन

अध्यात्म अहंकार का पोषण करता है, पतन की ओर ले जाता है। सेवा साधक में विनम्रता लाती है, मनुष्य के भीतर छिपे ईश्वर को देखना सिखाती है। महापुरुष आरम्भ में लोक से भले ही अलग रहते हों, लेकिन आध्यात्मिक उपलब्धि के बाद लोक सेवा के लिए समाज के बीच आ जाते हैं। रामकृष्ण परमहंस ने ब्रह्म में प्रतिष्ठित होकर भी स्वयं को लोगों से दूर नहीं किया।

स्वामी जी ने सेवा का आदर्श परमहंस देव से सीखा था। सच्ची पूजा का रहस्य सेवा में निहित है, जीव की सेवा ही शिव की वास्तविक उपासना है। सेवा से रहित उपासना दम्भ और भ्रम के अतिरिक्त कुछ नहीं। नर की सेवा से ही नारायण की प्रसन्नता होती है– "He who sees Siva in the poor, the weak, and in the diseased, really worships Siva, and if he sees Siva only in the image, his worship is but preliminary. He who has served and helped one poor man seeing Siva in him, without thinking of his caste, or creed, or race, or anything, with him Siva is more pleased than with the man who sees him in temples"[9]

वेदान्त की व्याख्या करते हुए स्वामी जी ने 1897 में लाहौर के नागरिकों का आह्वान किया था कि अपनी व्यक्तिगत मोक्ष का विचार स्वार्थ है। वेदांत का मर्म है अपनी चिंता छोड़ कर लाखों करोड़ों गरीब, भूखे, असहाय, अशिक्षित और अज्ञानी लोगों की सेवा में अपने को झोंक देना। इसके सिवाए सब कुछ बकवास और लफ्फाजी है। सेवा ही सच्चा धर्म है वास्तविक उपासना है। दुर्बल मन से इस रास्ते पर नहीं चला जा सकता।[10]

स्वामी विवेकानन्द कल्पनाजगत् में विचरण करने वाले अथवा कोरा बौद्धिक व्यायाम करने वाले चिन्तक न होकर व्यावहारिक दार्शनिक थे। यथार्थ के अग्निसिन्धु में डुबकी लगा कर वह तट तक सकुशल पहुँचे ही नहीं थे, सत्य के मुक्ताकण भी उन्होंने भरपूर प्राप्त किये थे। उनके चिन्तन के पीछे उनकी अनुभूति थी जिससे अनुप्राणित होने के कारण उनके शब्दों को अनूठी प्रामाणिकता प्राप्त हुई। वे वाग्विलासी वक्ता नहीं थे, अन्तःकरण की तीव्र भावना से विवश होकर साक्षात्कृत सत्य की अभिव्यक्ति करने वाले युगद्रष्टा थे। उनकी अनुभूति जितनी गहरी थी, उतनी ही उसकी परिधि व्यापक थी। भौतिक जीवन की अल्प अवधि को देखते हुए उनकी बहु–आयामी प्रतिभा का व्यापक प्रसार चमत्कृत करने वाला है। वेदान्त मनुष्य को शरीरी ईश्वर मानता है। उसकी दृष्टि में मानव 'अमृतस्यपुत्राः' हैं। मानव आत्मा सारे ज्ञान का मूल स्रोत है। शिक्षा इसमें पहले से वर्तमान ज्ञान के प्रकाशन और अन्वेषण में सहायक है। सीखने का अर्थ है आत्मा के आवरण का धीरे–धीरे हटना। इसीलिए स्वामी जी शिक्षा को मनुष्य में निहित पूर्णता की अभिव्यक्ति मानते है Education is the manifestation of the perfection already in man.[11]

स्वामी जी सूचना–संग्रह को शिक्षा नहीं मानते। सूचनाओं का अनपचा ढेर दिमाग में ठूंसने से जीवन भर उपद्रव करता है, वह अस्तित्व से एकात्म नहीं होता, विजातीय और आरोपित होने के कारण रक्त–माँस में रूपान्तरित नहीं हो पाता, निश्वास और धड़कन नहीं बनता, आँखों में ज्योति बन कर नहीं चमकता। इसीलिए स्वामी जी उसे शिक्षा कहकर पुकारना उसका अपमान मानते हैं "Education is not the amount of information that is put into the brain and runs riot there, undigested all your life.[12] अगर सूचना समुच्चय का ही नाम शिक्षा होता तो पुस्तकालय संसार के सबसे बड़े गुरू होते और विश्वकोष ऋषि कहलाते।

शिक्षा का सम्बन्ध छात्र की निजी प्रवृत्ति, रुझान और मनोरचना के उच्छेदन से नहीं, वरन उसके प्रोत्साहन, परिमार्जन और उन्नयन से है। विवेकानंद की मान्यता है कि दूसरे को शिक्षा नहीं दी जा सकती, व्यक्ति स्वयं ही अपना शिक्षक होता है।[13]

स्वामी जी के अनुसार शिक्षा का लक्ष्य

मानव–निर्माण है।[14] मनुष्य के लिए सर्वाधिक जिज्ञासा का विषय स्वयं मनुष्य है। मानव निर्माण करने वाली शिक्षा का मूल्यांकन स्वतंत्रता की मात्रा से ही होगा। स्वतंत्रता मानव का सार है। स्वतंत्रता हमारा वास्तविक स्वरूप और गंतव्य है। वह हमारे अस्तित्व, चेतना और जीवन की वास्तविक शर्त है। स्वतंत्रता को बाधित करने वाली शिक्षा और चाहे जो कुछ हो, शिक्षा नहीं है। शिक्षा हमें शारीरिक, मानसिक, राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और आध्यात्मिक बंधनों से मुक्त करती है– Freedom in all matters is the supreme prize of man.[15]

स्वामी विवेकानंद शक्ति में अगाध विश्वास रखते थे। वे उसे शिक्षा की कसौटी मानते थे। किसी भी विचारधारा को स्वीकृति देने से पूर्व उसे शक्ति के निकर्ष पर कसकर देखने का सुझाव देते हुए स्वामीजी कहते हैं कि जो वस्तु तुम्हें शारीरिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक रूप से दुर्बल बनाती है उसका विष की भाँति परित्याग कर दो क्योंकि वह वस्तु सत्यमय और जीवंत नहीं हो सकती।[16]

पाठ्यक्रम में शारीरिक शिक्षा की उपेक्षा मानव व्यक्तित्व के विकास के लिए घातक है। दुर्बल काया में ना तो स्वस्थ मन हो सकता है और ना ही मस्तिष्क। दुर्बल देह से विचारों को आत्मसात नहीं किया जा सकता। शक्ति को लोक–परलोक की कुंजी बताते हुए स्वामी जी कहते हैं– 'तुम्हारे शरीर के रक्त में जब अधिक शक्ति होगी तो तुम श्रीकृष्ण की प्रतापी शक्ति और प्रतिभा का मूल्यांकन अधिक सम्यक रीति से कर सकोगे। आत्मा का ऐश्वर्य और उपनिषदें अच्छी तरह से केवल तभी तुम्हारी समझ में आएगी जब तुम्हारी काया बलिष्ठ होगी और तुम स्वयं को मनुष्य अनुभव कर रहे होंगे।[17] वास्तव में शक्ति ही सत्य का पथ है, दमन के विरुद्ध सुरक्षा कवच है और शोषण उत्पीड़न करने वालों की दुरभिसंधियों को परास्त करने के लिए अजेय सुदर्शन चक्र है।

स्वामी विवेकानंद शिक्षा को चरित्र निर्माण का प्रमुख माध्यम मानते हैं। संघर्ष करने से चरित्र की धार पैनी होती है। जीवन की समस्याओं से पलायन करने से इनका समाधान नहीं होता। इनकी तीव्रता और उग्रता को कम करने का मार्ग है– संघर्ष, अनुकूलन और समायोजन। शिक्षा से हमें समय की आवश्यकताओं के अनुरूप ढलने की सिद्धता प्राप्त होती है।[18]

स्वामी जी ने मन की एकाग्रता को ही ज्ञान की कुंजी माना है। ज्ञान की किसी भी शाखा में सत्य की गवेषणाएं और उद्यम के किसी भी क्षेत्र में अर्जित की गयीं उपलब्धियाँ मन की एकाग्रता का ही परिणाम हैं। यह शक्ति जितनी अधिक होती है, ज्ञान भी उतना ही अधिक महान और गहन होता है। स्वामी विवेकानंद इसी कारण तथ्य–संकलन की अपेक्षा मन की एकाग्रता को शिक्षा का सार मानते थे।[19]

केवल बौद्धिक ज्ञान मानव जाति का कल्याण करने में समर्थ नहीं है। उसके पूरक के रूप में हृदय के विकास की आवश्यकता है। मात्र बुद्धि से प्रसूत और विकसित अनेक विज्ञान नई नई समस्याओं और विकृतियों को उत्पन्न करते हैं। वैराग्य हृदय का विस्तार करता है। हृदय के विकास से निस्वार्थता, पवित्रता, भ्रातृत्व, सेवा आदि भावनाएँ पनपती है जिन के अभाव में साक्षर राक्षस बन जाता है। इसीलिए स्वामी जी शिक्षा द्वारा उच्चतर मानवता के विकास के लिए हृदय की विराटता को अत्यंत महत्वपूर्ण मानते हैं।

स्वामी जी ने जनता जनार्दन, विशेषतः दरिद्र नारायण के उत्थान को शिक्षा का लक्ष्य घोषित किया। जब तक शिक्षा उनको भर पेट रोटी नहीं दिलाती, इनका आत्मसम्मान वापस नहीं करती, इन्हें सामाजिक निर्माण में भागीदार नहीं बनाती तब तक विदेशी भाषा के माध्यम से तोता रटन्त कर हवाई बातें करने से बाबू वर्ग पैदा करने के अलावा और कुछ नहीं हो सकता। स्वामी जी उस प्रत्येक भारतवासी को गद्दार कहते हैं, जो लाखों अशिक्षित

और दरिद्रों की कीमत पर विश्वविद्यालय की डिग्रियाँ हासिल कर अपने कर्तव्य की इति श्री मानने लगे हैं और उनके उत्थान की ओर से मुह मोड़ लेते हैं।[20]

स्वामी जी भावुक स्वप्नदृष्टा नहीं थे। कुशल चिकित्सक की भाँति उन्होंने समाज के रोग और उसके कारण को बहुत अच्छी तरह समझ लिया था इसलिए सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध जनता को लामबंद करने के लिए उन्होंने आजीविका दिलाने वाली शिक्षा का विचार प्रस्तुत किया– No priest-craft, no social tyranny- more bread, more opportunity for everybody.[21]

अपने देशवासियों के समग्र उत्थान के लिए स्वामी जी ने शिक्षा में अध्यात्म और विज्ञान के तर्कसंगत समन्वय पर बल दिया– 'What we want are western science coupled with Vedanta, Brahmacharya as their guiding motto, and also shraddha and faith in one's own self.

दुनिया के अग्रणी देशों की तुलना में भारत पीछे न रहे, इस पर स्वामी जी की दृष्टि स्पष्ट थी। उन्होंने शिक्षा को आत्मनिर्भरता का लक्ष्य प्रदान किया और समाज के आर्थिक अभ्युत्थान के लिए तकनीकी एवं औद्योगिक शिक्षा पर जोर दिया। आत्मनिर्भरता न केवल धर्म–अध्यात्म में वरन प्रत्यक्ष जीवन में भी उनका मूल मंत्र थी। वे कहते थे– 'केवल पुस्तकीय शिक्षा काफी नहीं। हम ऐसी शिक्षा चाहते हैं जिससे चरित्र का निर्माण हो, मन की शक्ति विकसित हो, बुद्धि का उत्कर्ष हो और व्यक्ति आत्मनिर्भर बने। स्वामी जी ने भारत के विकास के लिए पश्चिम से कला, उद्योग और व्यावहारिक जरूरतों को पूरा करने की शिक्षा ग्रहण करने का स्वागत किया किन्तु उनकी मूल शर्त यह थी कि उससे आर्थिक स्तर का उन्नयन और भौतिक समस्याओं का निराकरण तो हो किंतु लोगों को अपनी खोई हुई गरिमा भी प्राप्त हो। स्वामी जी के शब्दों में - Real education is that which enables one to stand on his own legs.[22]

स्वामी विवेकानंद के अनुसार शिक्षा एक सतत प्रक्रिया है। रामकृष्ण परमहंस कहते थे– 'मैं जब तक जीवित हूँ, मेरी शिक्षा चलती रहेगी।' वह किसी विशिष्ट पहलू, विषय, आयुवर्ग और दशा तक सीमित नहीं। हर आयु शिक्षा की आयु होती है और हर क्षेत्र उसका क्षेत्र। शिक्षा और जीवन एक दूसरे के पर्याय हैं। उसका मूल निहित है जिज्ञासा में। यदि प्रश्न है, पृच्छा है, उत्सुकता है तो समाधान भी निकलेगा। पृच्छा मनुष्य के विकास की पहली शर्त है। जहाँ खोज है, वहीं गति है और स्वयं खोज में उपलब्धि का संकेत निहित रहता है। खोज कर पाया गया समाधान अस्तित्व से एकात्म हो जाता है।

युगाचार्य विवेकानंद की शिक्षा दृष्टि अत्यंत व्यापक, समन्वयमूलक, सुविकसित, सर्वांगीण तथा बहु आयामी थी। उसमें धर्म, दर्शन, मनोविज्ञान, समाजशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, पर्यावरण आदि के सिद्धांतों का सामंजस्य कर पूर्ण वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान किया गया है। उसमें इतिहास–बोध भी है और भविष्य दृष्टि भी। उसमें व्यक्ति के पूर्ण विकास पर ध्यान दिया गया है, साथ ही सामाजिकता के सम्यक विकास की भी उपेक्षा नहीं की गयी है।

स्वामी विवेकानन्द की शिक्षा शारीरिक बल, व्यावहारिक अभिवृत्ति, वित्तीय कुशलता, सांस्कृतिक एकात्मता और भाव तथा इच्छा शक्ति के प्रशिक्षण पर बल देती है। उन्होंने सृजनात्मकता, मौलिकता और उत्कृष्टता को शिक्षा की मूल मांग के रूप में निरूपित किया। उन्होंने शिक्षा का आधार अनुभव को माना और पाठ्यक्रम में पश्चिमी विज्ञान और वेदान्त के समावेश पर बल दिया। स्वामी जी ने मानसिक एकाग्रता को शिक्षा की सर्वश्रेष्ठ तकनीक माना और गुरु–शिष्य के पुरातन सम्बन्धों की पुनः प्रतिष्ठा को शिक्षा में जीवन फूंकने के लिए अत्यन्त आवश्यक घोषित किया। स्वामी जी युग प्रवर्तक महाविभूति थे। पं. जवाहरलाल नेहरू ने उनके विषय में उचित ही कहा है– "Rooted in the past and full of pride in India's prestige, Vivekananda

was yet modern in his approach of life's problems and was a kind of bridge between the past of India and the present. His mission was the service of mankind through social service, mass education, religious revival and social awakening through education."

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. भवन्स जर्नल, 20 Jan, 63 से उद्धृत
2. श्री अरविंदो, कम्पलीट वर्क्स ऑफ स्वामी विवेकानंद, पृष्ठ–5 / 136
3. उपरोक्त, पृष्ठ–2 / 321
4. रोम्या रोलों, द लाइफ ऑफ़ विवेकानंद एंड द यूनिवर्सल गॉस्पेल, पृष्ठ–281
5. श्री अरविंदो कम्पलीट वर्क्स ऑफ स्वामी विवेकानंद, पृष्ठ–1 / 386–87
6. उपरोक्त, पृष्ठ–2 / 140
7. रोम्यां रोलाँ, द लाइफ ऑफ़ विवेकानंद एंड द यूनिवर्सल गॉस्पेल, पृष्ठ–309
8. श्री अरविंदो कम्पलीट वर्क्स ऑफ स्वामी विवेकानंद, पृष्ठ–1 / 106
9. प्रबुद्ध भारत, अगस्त, 1968, पृष्ठ–344
10. श्री अरविंदो कम्पलीट वर्क्स ऑफ स्वामी विवेकानंद, पृष्ठ–4 / 481
11. उपरोक्त, पृष्ठ–4 / 358
12. उपरोक्त, पृष्ठ–3 / 302
13. उपरोक्त, पृष्ठ–4 / 93
14. उपरोक्त, पृष्ठ–3 / 221
15. योगेश्वरानंद, टीचिंग्स ऑफ स्वामी विवेकानंद, पृष्ठ–199
16. श्री अरविंदो कम्पलीट वर्क्स ऑफ स्वामी विवेकानंद, पृष्ठ–3 / 224
17. उपरोक्त, पृष्ठ–3 / 242
18. श्री अरविंदो कम्पलीट वर्क्स ऑफ स्वामी विवेकानंद, पृष्ठ–7 / 147
19. उपरोक्त, पृष्ठ–6 / 38
20. उपरोक्त पृष्ठ–5 / 58
21. उपरोक्त, पृष्ठ–4 / 368
22. उपरोक्त, पृष्ठ–7 / 147

Copyright © 2015, Dr. Alok Bhardwaj. This is an open access refereed article distributed under the creative common attribution license which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.